पूज्य लालचंदभाई का प्रवचन
भिंड, ता. ६-४-१९८९
श्री समयसार, गाथा ३१, प्रवचन नंबर P ११

ज्ञायक आत्मा और जो रागादी विकृत भाव है उसके भेदज्ञान के लिए तो बहुत गाथा थी। बहुत जगह ज्ञान भिन्न ने राग भिन्न, जो पट्टी लगाया था ना पहले दिन, ज्ञान भिन्न और राग भिन्न, वो एक प्रकार का भेद ज्ञान का मंत्र है। इससे जरा विशेष सूक्ष्म अतींद्रियज्ञानमय भगवानआत्मा और ज्ञेयभूत इंद्रियज्ञान, ज्ञानमय आत्मा और ज्ञेयभूत इंद्रियज्ञान अर्थात अतींद्रियज्ञानमय आत्मा और इन्द्रियज्ञान वह दो के बीच में भेदज्ञान की गाथाओं शास्त्र में भी कम आती है। बहुत कम, बहुत कम आती है।

वैसे तो १५ गाथा में भी आया है थोड़ा आविर्भाव- तिरोभाव के रूपमें, ३१ मी गाथा में भी है और ४९ गाथा में भी समयसार में है। ऐसे प्रवचनसार में भी इंद्रियज्ञान वो जड़ है, अचेतन है, आकुलता का उत्पन्न करनेवाला है। वह आत्मा का त्रिकाल स्वभाव भी नहीं है और क्षणिक स्वभाव भी नहीं है। और अलिंगग्रहण की १७२ गाथामें भी प्रथम दो बोल है कि आत्मा है वो इंन्द्रियज्ञानके द्वारा परको जानता ही नहीं है। पर को जानने के लिए इंद्रियज्ञान साधन नहीं है। वो ही इंद्रियज्ञान आत्माको जाननेके लिए भी साधन नहीं है, इसलिए सचमुच सम्यक प्रकार से देखा जाए तो इंद्रियज्ञान में स्वपरप्रकाशक का अभाव है, तो भी इंद्रियज्ञानमें स्वपरप्रकाशक का प्रतिभास तो होता है।

क्या कहा? मैंने पहले कहा कि शुध्दआत्मा और राग भिन्न है वो बात तो बहुत आती है, मगर हमेरे पिताजी फरमाते थे कि ज्ञान से ज्ञान का भेदज्ञान करो। ज्ञान से ज्ञान का भेदज्ञान करो, अर्थात अतींद्रियज्ञानमय भगवान आत्मा और भावईन्द्रिय खंडज्ञान, उसका नाम खंडज्ञान है। अखंडज्ञान और खंडज्ञान दो भिन्न भिन्न तत्त्व है। सचमुच भावइंद्रिय खंडज्ञान वो त्रिकाली शुद्ध आत्मा भी नहीं है, स्वभाव नहीं है और आत्मा का परिणाम भी नहीं है। वैसे रागादी आत्मा का परिणाम नहीं है क्योंकि राग आत्मा का आश्रय से नहीं होता है, इसलिए राग भिन्न है। वह राग आत्मा का लक्षण नहीं है। इसलिए आत्मा को प्रसिद्ध नहीं करता है। इसलिए राग भिन्न है। और राग आत्मासे कथंचित अभिन्न भी नहीं होता है इसलिए राग आत्मासे भिन्न है।

ऐसे जो पराश्रित इंद्रियज्ञान प्रगट होता है वह आत्माके आश्रयसे प्रगट नहीं होता है इंद्रियज्ञान। अतिन्द्रियज्ञान तो आत्मा के आश्रये प्रगट होता है। इंद्रियज्ञान का अवलंबन आत्मा नहीं है। इन्द्रियज्ञान का अवलंबन पर पदार्थ है। अंदर में द्रव्यइन्द्रिय है और बाहरमें नोकर्म है। इसलिए इंद्रियज्ञान आत्माका आश्रय से नहीं होता है। इसलिए इंद्रियज्ञान आत्माका परिणाम नहीं है और इंद्रियज्ञान आत्माको प्रसिद्ध नहीं करता है। इसलिए भी वह आत्मा का परिणाम नहीं है और इंद्रियज्ञान आत्मा से अनन्य नहीं होता है। इसलिए भी वो इंद्रियज्ञान आत्मा का परिणाम नहीं है।

ऐसे सूक्ष्म भेद ज्ञानकी बात अभी तो गुरुदेवका वियोग हो गया उसने तो सब बात बता दिया है।

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

उसने बताया हुआ जो तत्त्व हम उसको बार-बार घूँटते हैं, चिंतन करते हैं। जो उसका अनंता अपने पर उसका उपकार है। सज्जन उपकारको भूलता नहीं है। आहाहा| तो अतींद्रियज्ञानमय भगवानआत्मा से इंद्रियज्ञान, शास्त्रज्ञान भिन्न है। डॉक्टर कहाँ गया? बैठा है की नहीं? आया नहीं? यह वकीलात का ज्ञान, डॉक्टरका ज्ञान, इंजीनियरका ज्ञान, ओहो| वह तो दूर रहो, वह तो दूर रहो, वह तो कुमति-कुश्रुत है| मगर शास्त्रके लक्ष्यसे हुआ इंद्रियज्ञान जो आत्मा को तिरोभूत करके प्रगट होता है, वह भी कुमति ने कुश्रुत है। जो ज्ञान जिसका है उसको प्रगट ना करें और जो ज्ञान जिसका नहीं है उसको प्रसिद्ध करें तो ज्ञान नहीं है अज्ञान है। आहाहा|

तो अतींद्रियज्ञानमय भगवानआत्मा और ज्ञेयभूत इंद्रियज्ञान वह दोनों के बीच में भेदज्ञान की यह गाथा आई है। जैसे रागदि भावकका भाव है ज्ञायकका भाव नहीं। व्यवहार रत्नत्रयका परिणाम वह ज्ञायकका भाव नहीं है, जाती जुदी है। वह भावकका भाव है। भावक याने जो कर्म है द्रव्यकर्म, वह भावक है। उसका संबंधसे उत्पन्न होनेवाला भाव उसका स्वामी भावक याने पुद्गल उसका स्वामी है। आत्मा चैतन्यमूर्ति जड़ का स्वामी होता नहीं है। स्वस्वामी संबंध रागके साथ आत्माको नहीं है। आहाहा| वह भावकका भाव है।

ऐसे इंद्रियज्ञान पांचइंद्रिय ने छठा मन, भावइंद्रिय वो ज्ञेयका भाव है, ज्ञायकका भाव नहीं है। ज्ञेयका भाव कहा, कहेना पड़ा, मगर सचमुच अपने आप ही ज्ञेय हैं| वह ध्येय तो नहीं है मगर सचमुच ज्ञेय भी नहीं है। ध्येय तो ध्रुव परमात्मा है और ज्ञेय, भेद अपेक्षासे निश्चय मोक्षमार्ग है, अभेद अपेक्षासे तो आत्मा ही ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय है। और इंद्रियज्ञान तो पराया भाव है। जैसे राग पराया भाव है ऐसे इंद्रियज्ञान पराया भाव है, स्व-भाव, स्वभावभाव नहीं है। तो तहाँ तक इंद्रियज्ञान जिंदा रहता है, जीवित रहता है अर्थात इंद्रियज्ञानको जीव ज्ञान मानता है, तहाँ तक मोहका क्षय नहीं होता। मिथ्यात्वका नाश नहीं होता। यह छुपा चोर है।

जैसे मुंबई में पहले तो सुना था कि ऊंदर बहुत होता था, ऊंदर, चूहा। तो रातको सब सो जावे ने तो वो चूहा उसको फूंक-फूंककर खाता है। फूंक लगावे, फूंक समझे बादमें काटे तो वह जागे ही नहीं। आहाहा! काट जाए फाजलमें (सवेरे) उठे यह क्या हो गया पैर में? चूहा काटा मगर खबर पडी नहीं है, समझे? ऐसे इंद्रियज्ञान भगवान आत्माको तिरोभूत करके प्रकट होता है, वह दुश्मन है मित्र नहीं है। आहाहा!. दुश्मन को मित्र मान लेना बहुत धोखाकी बात है। रागको तो दुश्मन मानते हैं क्योंकि राग आकुलताका उत्पन्न करनेवाला है। और कर्मबंधका कारण है और कषाय भी है उसका नाम, कषाय तीव्र और मंद। मगर यह जो भावइंद्रिय खंड ज्ञान है, छुपा घरका चोर है। अंदर में घुस गया है और मोहराजाने उसका नाम ज्ञान रखा। मोहराजाने उसका नाम ज्ञान रखा और सर्वज्ञ भगवानने उसका नाम ज्ञेय रखा। ज्ञान नहीं है मगर ज्ञेय है। जो जिसको ख्यालमें आ जावे कि वह ज्ञान नहीं है, नाम निक्षेप से ज्ञान है, भाव निक्षेप से तो ज्ञेय ही है। हेयरूप ज्ञेय है। आहाहा|

ऐसी अदभूत बात आचार्य भगवान भेद ज्ञानकी अतींद्रियज्ञानमय प्रभु, विभु, भगवानआत्मा अंदर विराजमान है| और इंद्रियज्ञानका संबंधसे उत्पन्न होनेवाला जो भावइंद्रिय खंडज्ञान वह आत्मा का परिणाम भी सचमुच नहीं है। द्रव्य संग्रह में तो बृहदद्रव्यसंग्रह में तो ऐसा आता है की जैसे रागादी भावकर्म है,

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

असदभूत व्यवहारनयका विषय ऐसे इंद्रियज्ञान भी भावकर्म है। वो कर्मकी जात है, ज्ञान चेतनाकी जात नहीं है। कर्मधारा है यह ज्ञानधारा नहीं है। आहाहा! जैसे राग कर्मधारा ऐसे इंद्रियज्ञान भी कर्मधारा, भाव कर्ममें गया वो। भावकर्म है, आत्माका कर्म नहीं है। आहाहा! ऐसे हैं विपरीत है। ऐसे अपूर्व बात ये ३१मी गाथामें आचार्य भगवान हमको समझाते हैं। हम सब समझनेकी कोशिश करें तो अपना हित हो जाए।

अनादि अमर्याॅदरूप **टीका**:- **अनादि अमर्यादरूप** अनादि, अनादि, अनादिकाल गया। आहाहा! अनंत, अनंतकाल बीते भूतकालमें, लोहाडीयाजी| आ गये| अच्छा| अनंत, अनंतकाल बीते भूतकाल में, आहाहा! अनादि अमर्यादरूप उसकी मर्यादा उसकी सादी नहीं, अनादिसे है मगर अंत होवे ऐसा धर्म है उसका, अनादि अनंत नहीं है क्योंकि विभाग है। विभाव अनादि से होने पर भी अनादि शांत होता है। अनादि अनंत नहीं होता है। तो **अनादि अमर्यादरुप बन्धपर्यायके वश** यानी इंद्रियज्ञान को ज्ञान मानना, आहा! वो अज्ञान है।

इंद्रियज्ञान को ज्ञान माना वह अज्ञान है| आहाहा! क्योंकि वह ज्ञान है ही नहीं वो तो ज्ञेय है, ज्ञान नहीं है। **अमर्यादरुप बन्धपर्यायके वश** उपादेय मान लिया, थोड़ा शास्त्रका ज्ञान आ गया अहम् हो जाता है। आहाहा! जैसे कषायकी मंदतासे अहम् आता है, सबको नहीं, कोई-कोई को सब की बात नहीं है| समझे? कषायकी मंदतामें भी अहम् आ जाता है तो जीवको सम्यकदर्शन होता नहीं है, क्योंकि उससे मेरा मोक्ष हो जाएगा ऐसा मानता है, मिथ्यात्व पुष्ट हो जाता है।

ऐसे शास्त्रका ज्ञान उघाड़ हो गया थोड़ा न्याय, व्याकरण, संस्कृत पढ़ लिया, आहा| गाथा ५,५०,१००,२००,५०० मुखपाठ हो गई, आहाहा! तो फरमाते हैं कि भैया! तु ऐनाथी छेतराणो छुं, छेतराणो छुं, क्या ठगा गया है। वो तेरा स्वरूप नहीं है। **बन्धपर्यायके वश** याने भावबंधके वश याने इन्द्रियज्ञान उपादेय माना उसका नाम भावबंध है। शुद्धआत्मा उपादेय आने के बाद इंद्रियज्ञान हो तो तो वो भिन्न जानते हैं। अंतरमुख होकर अतींद्रियज्ञान के द्वारा शुद्ध आत्माको जाना और इंद्रियज्ञान भी रहा, इंद्रियज्ञानभी रहा। आहाहा.! मगर निर्जीव हो गया वो, उसमें जीवन प्राण नहीं रहा वो तो मुर्दा हो गया। आहाहा!

अभिप्राय का सहयोग खीस गया उसमें से। अभिप्रायका दोष था ने, अभिप्राय का दोष, श्रद्धाका दोष बड़ा दोष है। राग होने परभी अभिप्राय सही हो जाता है। राग मेरा स्वभाव नहीं है, मैं तो चिदानंद आत्मा हूं, ऐसे भेदज्ञान करने के बाद भी राग तो थोड़ा काल आता भी है मगर अपना स्वभाव जानता नहीं है। ऐसे एक दफे अतींद्रियज्ञानमय भगवानआत्मा और इंद्रियज्ञान उसके बीच में प्रज्ञाछीणी डालें, प्रज्ञा याने अतींद्रियज्ञान एक नया प्रगट होता है वो जात्यान्तर ज्ञान है। अनादि कालसे प्रकट हुआ नहीं, अनादि मिथ्यादृष्टि के लिए यह बात है, सादी मिथ्यादृष्टि की बात तो नहीं है| अनादि मिथ्यादृष्टि, अनादि लियाने आहाहा!

अनादि मिथ्यादृष्टि जीवकी बात चलती है, के भेदज्ञान करके अनुभव किया और इंद्रियज्ञान और अतींद्रियज्ञान को जुदा जान लिया। जुदा अनुभव कर लिया। अनुभव करनेके बाद सविकल्प दशा आती है और शास्त्र तरफ लक्ष जाता है, आहाहा! लक्ष आत्मा पर नहीं जाता है, इंद्रियज्ञान पर जाता है। शास्त्रका लक्ष करनेवाला आत्मा नहीं है। आत्मा तो आत्माका लक्ष करने वाला है। जो आत्माका लक्ष करें वो परिणाम

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

आत्माका है, जो शास्त्र का लक्ष करें वह परिणाम आत्मा का (नहीं है)| आहाहा! ऐसे भेदज्ञान हो जाता है। इंद्रियज्ञान भी रह जाता है, शास्त्रज्ञान भी रह जाता है। जैसे राग रहता है ऐसे इंद्रियज्ञान भी रह जाता है क्योंकि जहाँ तक केवलज्ञान नहीं हो तहाँ तक। आहाहा|

एक समयकी ज्ञानकी पर्याय, पर्याय एक, समय एक, इसका दो भाग पड़ जाता है। स्वआश्रितमें अतींद्रियज्ञान और परालंबी इंद्रियज्ञान। समय एक, पर्याय एक, एक पर्यायका दो भाग पड़ता है। तो भले इंद्रियज्ञान रहे, ज्ञान का ज्ञेयरूप भले रहे, मगर यह मेरा भाव (नहीं है)। जैसे राग मेरा स्वभावभाव नहीं है| आहाहा| (बटवारा) हो गई, क्या कहा? जैसे दो भागीदार हो जहाँ तक (बटवारा) ना हो तहाँ तक चिंता रहती है। क्या होगा, क्या होगा, समझे? हाँ बटवारा, आहाहा! स्टैम्प के कागजमें बटवारा हो गया| आहाहा! के राग भिन्न ने आत्मा भिन्न। ऐसे इंद्रियज्ञान भिन्न ने अतींद्रियज्ञानमय प्रभु, विभु, भगवानआत्मा भिन्न है। ऐसा अतिन्दियज्ञानके द्वारा अतींद्रियज्ञान छीणी है, प्रज्ञाछीणी वो इंद्रियज्ञान और अतिन्द्रियज्ञान से जुदा पाड़ती है। आहाहा! तो पाडने के बाद इंद्रियज्ञान तो रहता है थोड़े टाइम केवलज्ञान न हो तहाँ तक। ऐसे राग यथाख्यातचारित्र न हो तहाँ तक रहता है। आहाहा! वह सम्यकदर्शनमें बाधक नहीं है, सम्यकदर्शनमें बाधक नहीं है। ज्ञान, केवलज्ञानमें बाधक है। इंद्रियज्ञान केवलज्ञानमें बाधक है और राग यथाख्यात चरित्रमें, है तो बाधक ही दो है तो बाधक, साधक नहीं है।

क्या कहा? अनुभवके बाद इंद्रियज्ञान रहता है थोड़े टाइम के लिए, उसका आयुष्य तो अभी अल्प रहा है, पर (लेकिन) रहा है। जहां तक केवलज्ञान ना हो तहाँ तक वो केवलज्ञान में बाधक तत्त्व है। ऐसे थोड़ा राग अल्प रहता है अस्थिरताका, साधक को भी, वो राग यथाख्यात चारित्रमें बाधक है मगर सम्यकदर्शनमें बाधक होता (नहीं है)| आहाहा| ऐसा स्वरूप है। आहाहा|

सम्यकदर्शन वो कोई बाधक नहीं है। जो विपरीत दृष्टि आ जावे तो बाधक है, अविपरीत दृष्टि रहती है तो बाधक (नहीं है)। आहाहा| सम्यकदर्शन में बाधक नहीं है। इंद्रियज्ञान और राग, राग और इंद्रियज्ञानका जो प्रेम आ जावे, अधिकता आ जावे तो बाधक हो जाता है, तो सम्यकदर्शन टिकता नहीं है। शुद्धनय ग्रहे (तो) मोक्ष, तजे (तो) बंध है| आहाहा|

ऐसे **अनादि अमर्यादरूप बन्धपर्यायके वश जिसमें समस्त स्व-परका विभाग अस्त हो गया है**। "मैं अतींद्रियज्ञानमय भगवानआत्मा हूं" और ऐ "इंद्रियज्ञान वो मेरा है" वो दो के बीच में भिन्नता होने पर भी उसका विभाग अस्त हो गया है। इंद्रियज्ञानका अधिकतासे, प्रेमसे, उपादेय बुद्धिसे कर्ताका कर्म मानने से, कर्ताका कर्म नहीं है वह तो ज्ञानका ज्ञेय है। कर्ताका कर्म मानता है तो भेदज्ञान अस्त हो जाता है। है तो भिन्न-भिन्न अतींद्रिय ज्ञानमय भगवानआत्मा और इंद्रियज्ञान खंडज्ञान, अखंड और खंड भिन्न-भिन्न ही है। अखंड खंड में नहीं आता और खंड अखंड में नहीं आता है। आहाहा|

तो **जिसमें समस्त स्व-परका विभाग** याने जुदा, विभाग याने जुदाई अस्त हो गया है, दिखाई नहीं देता है| इंद्रियज्ञानका, शास्त्रज्ञान का प्रेम अहम् हो गया, ज्ञानका मद हो जाता है। मदका प्रकार है ने। आहाहा| ज्ञान मद है भैया। कषाय की मंदतावाला तो कभी बच जाता है कोई ज्ञानी मिले तो के भाई ये तेरा स्वभाव (नहीं है)। मगर, पंडित हो गया "मैं जानता हूं" वह मर जाता है। भाई हमेरे पास पहले नहीं था, अभी तो ज्ञान बहुत बढ़ गया है। अरे ज्ञानका उत्पाद ही नहीं हुआ तो बढ़ता कैसे हैं? बढ़ने की बात

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

कहां आई? तुं क्या बोलता हैं? क्या बकते हो तू? अतींद्रियज्ञान जब प्रगट होता है वो बढ़ते बढ़ते केवलज्ञान होता है वो तो बराबर है मगर इंद्रियज्ञान वो ज्ञान ही नहीं है। आहाहा! वो उत्पन्न ही नहीं हुआ तो बढ़ने की बात (कहाँ से आई) आहाहा! जैसे लक्ष्मी का ढेर हो गया, अभिमान हो जाता है, ऐसे ज्ञान ज्ञेयका ढेर हो गया, ज्ञान का नहीं ज्ञेयका ढेर हो गया। उसमें अभिमान करके ये भव हार जाता है। आहाहा! मनुष्य भव (हार जाता है) परिग्रह है। आहाहा! इंद्रियज्ञान परिग्रह है। आहाहा। मुछाँ परिग्रहः, मुछाँ (परिग्रहः) ए इन्द्रियज्ञान मेरा है मूर्छित हो गया। वो परिग्रह है। उसने इंद्रियज्ञानको पकड़ लिया और भगवानआत्मा को छोड़ दिया। अपमान कर दिया आत्माका।

ऐसे **स्व-परका विभाग अस्त हो गया है**। अनादि से अस्त तो विभाग हो गया है मगर भेदज्ञानसे आत्मा का उदय होता है। **अर्थात् जो आत्माके साथ ऐसी एकमेक हो रही है कि भेद दिखाई नहीं देता**, द्रव्यइंद्रियकी बात पहले करते हैं। पहले बात द्रव्यइंद्रिय, द्रव्यइंद्रिय और आत्मा एक मेक जैसा लगता है, भेद अस्त हो गया है। द्रव्यइंद्रिय ये स्पर्श, रस, गंध, वर्ण और शब्द, छठ्ठा मन ऐसे जो द्रव्यइंद्रिय पुद्गल की रचना है, वो चेतन की रचना वे नहीं है। प्योर (pure) पुद्गल है। प्योर, समझे ने? कोई भेणसेण (नहीं), थोड़ा चेतन ने थोड़ा जड़ मिश्र हुआ ऐसा नहीं है। ए द्रव्य इंद्रिय जड़ है, जड़ परमाणुसे बना हुआ पिंड है, वो दो के बीच में भेदज्ञान नहीं है तो अस्त हो गया है। द्रव्यइंद्रिय भिन्न ने आत्मा भिन्न मालूम नहीं होता है, तो अर्थात जो आत्मा के साथ ऐसी एकमेक हो रही है याने भ्रांति हो रही है, एकमेक हो रही नहीं है एकमेक जैसी लगती है, वह तो भ्रांति है। जड़ चेतन एक होता नहीं है। **कि भेद दिखाई नहीं देता**। जुदाई होने पर भी उसकी जुदाई मालूम नहीं होती है। क्योंकि कान हो तो सुन सकते हैं, आंख हो तो देख सकते हैं। अच्छा| जो आंख न हो और कान न हो तो कोई देख शके नहीं, जान सके नहीं! तो सिद्ध भगवानके पास तो द्रव्यइंद्रिय है ही नहीं तो क्या वह जानता नहीं है? आहाहा! ये जाननेका साधन ही नहीं है। इंद्रियज्ञान परको जानने के लिए साधन नहीं है। स्व और परको जाननेके लिए अतींद्रियज्ञान साधन है। तो तो सब व्यवहारका लोप हो जाएगा! व्यवहारका पक्ष चले जाएगा ने व्यवहार आ जाएगा। घबराना नहीं, घबराने की बात नहीं है। आहाहा!

समस्त ऐसे भेद दिखाई नहीं देता, **ऐसी शरीरपरिणामको प्राप्त**। ये अवयवी है ना, सारा शरीर उसका एक अवयव है, भाग, आंख है ना यह स्पेरपार्ट (spare part) है। जैसे मोटर है उसका स्पेरपार्ट जुदा-जुदा होता है ना। ऐसे अवयवी पदार्थ है सारा शरीर उसका एक अवयव, अवयव है तो उसका एक भाग है। जैसे स्पर्शइंद्रिय, रसइंद्रिय, द्रव्यइन्द्रिय, अभ द्रव्यइंद्रिय की बात, ध्राणइन्द्रिय, चक्षुइन्द्रिय और ये श्रोतइन्द्रिय। ये पांच द्रव्यइन्द्रियाँ है। और छठ्ठा मन। वो (मन) मनोवगर्गणा से बना हुआ है। ऑपरेशनसे भी दिखाई देता नहीं है। ऐसा सूक्ष्म है। विचार इधर से (जहां मन है वहाँ से) चलता है इधर से (ऊपरसे) नहीं चलता है। मानसिक जो विचार उत्पन्न होता है उसका निमित्तका स्थान यहां (मन) है। निमित्तका स्थान इधर(-मगज) (नहीं है)। मगजमें ऐसा आया, मगजमें विचार आया| मगज में ऐसा विचार आया| आहाहा! वो निमित्तरूप है। द्रव्यइंद्रिय निमित्तरूप है। मगर जहाँ तक वो निमित्त देखता है तहाँ तक अज्ञानी है। उसको ज्ञेय देखे तो अज्ञान टल जाता है।

क्या कहा? ये जगतमें कोई निमित्त नहीं है। जगतमें सब ज्ञेय ही है। दृष्टांत तो दिया था। आठकर्म

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

निमित्त नहीं है। बोलो, दृष्टांत नहीं दिया था| आहाहा| सोनगढ़का संत तो सबको ज्ञेय, ज्ञेयरूप से जानता है, निमित्तरूपसे जानता नहीं है। अरे! निमित्तको नहीं माने तो संसार का अभाव हो जाएगा। हमको इष्ट है। वो तो इष्ट है इसलिए तो समयसारकी रचना है। के चारगतिकी सिद्ध करने के लिए पुष्टि करने के लिए ये समयसारकी रचना नहीं है। आहाहा!

ऐसी शरीरपरिणामको प्राप्त द्रव्येन्द्रियोंको तो जो जडइंद्रिय, द्रव्यइन्द्रिय है उसको तो भेदज्ञानकी बात चलती है। ज्ञायक प्रभु आत्मा और द्रव्यइंद्रिय, द्रव्यइन्द्रिय है, द्रव्यइन्द्रियका अस्तित्व है, नहीं है ऐसा उसको काटकर अलोक में नहीं भेजना है। उसको उसके स्थान पर रहने दो। अपने को कोई नडतर है नहीं मगर ये कान मेरा है वो अज्ञानी हो गया। आहाहा| आत्माको कान नहीं होता है, आत्माको द्रव्यचक्षु होता नहीं है। आहाहा! आत्माको कान होवे तो कानसे सुने मगर कान है नहीं, नाक भी नहीं है, नाकसे सुंघता नहीं है पदार्थ, ये जीभ नहीं है आत्माको तो रस चाखता नहीं है। अभी ४९ गाथाका अनुसंधान में लेना है, द्रव्य इंद्रिय जीतने के लिये।

द्रव्येन्द्रियोंको तो निर्मल भेदाभ्यासकी प्रवीणतासे याने द्रव्यइंद्रिय भिन्न है और उसको जाननेवाला भावइंद्रिय भी भिन्न है। उसके अलावा में त्रिकाल, त्रिकाल ज्ञानानंद परमात्मा हुं, ऐसे निर्मल जुदाई करनेका प्रयोगसे **भेदाभ्यासकी प्रवीणतासे प्राप्त अन्तरङ्गमें प्रगट अतिसूक्ष्म चैतन्यस्वभावके**, आहाहा! अंदर भगवान प्रभु, विभु प्रगट है, और प्रगट अतिसूक्ष्म संवर, निर्जरा ने मोक्ष तो सूक्ष्म है मगर ज्ञायकदेव अतिसूक्ष्म है। एक एक शब्द की कीमत है भावलिंगी संत की। आहाहा| **अतिसूक्ष्म चैतन्यस्वभावके अवलम्बनके बलसे सर्वथा अपनेसे अलग किया**। सर्वथा, कथंचित भिन्न और कथंचीत अभिन्न ऐसा है नहीं, सर्वथा भिन्न है। द्रव्यइंद्रिय जब अंर्तमुख होकर अपना अतिसुक्ष्म चैतन्य प्रभुका लक्ष्य किया, अवलंबन लिया तो अवलंबन लेते ही ये मैं हूं और ये मैं नहीं हूं ऐसा भेदज्ञान हो जाता है। एकत्वबुध्दि तूट जाती है। द्रव्यइन्द्रिय रह जाती है मगर द्रव्यइंद्रिय में अहम् छूट जाता है, और जाननेका साधन है ऐसी मिथ्याभ्रांति टल जाती है।

जानने का निमित्त कारण तो चाहिए ने! आहाहा! निमित्ताधीन दृष्टिवाणा निमित्त को शोधता है। उपादानकी स्वशक्ति को पीछानता नहीं है। आजतक कानसे कोईने देशनालब्धि सुनी ही नहीं है, आहाहा| क्योंकि कान ही नहीं है, कहाँ से सुने? वो तो ज्ञानमय पुंज आत्मा है। इससे भी सूक्ष्म थोड़ा आएगा। अभी भावइंद्रियमें इससे भी सूक्ष्म, आहाहा| मगर द्रव्यइंद्रियकी जुदाई जिसको लगे उसको के भावइंद्रिय जुदी ही है, वो समझने के लिए उसका मिथ्यात्व गलता है। थोड़ा ज्ञानकी अंदर निर्मलता आती है तो दूसरे नंबरका भेदज्ञान उसको जच जाता है। द्रव्यइंद्रिय भिन्न है आत्मा से आहाहा! वो जाननेका साधन नहीं है, वो भिन्न साधन है। भिन्न साधन, भेदसाधन ने अभेदसाधन। भिन्नसाधन, भेदरूपसाधन और अभेदरूप साधन, साधनका तीन प्रकार है। वो तो भिन्न है। जानने का साधन द्रव्यइंद्रिय (नहीं है). आहाहा!

सर्वथा अपनेसे अलग किया। सो वह द्रव्येन्द्रियोंको जीतना हुआ। ये ज्ञेयका तीन विभाग है। द्रव्यइंद्रिय, भावइंद्रिय और भावइंद्रियका विषय तीनों को इंद्रियाँ कहा। इंद्रियों तीनों का नाम इंद्रियों अर्थात तीनों ज्ञेय है। ज्ञेय याने पर ज्ञेय है,आहाहा| स्वज्ञेय नही है। जात आत्मा की नहीं है तीनों में। तीनों में कोई जात, लक्षण आत्मा का दिखाई देता नहीं है।

ऐसे उसका ४९- मी गाथा में थोड़ा आधार ले लेवे। अपने को थोड़ा टाइम है ने, टाइम है थोड़ा टाइम अपने को ज्यादा मिला एक दिनका तो स्वाध्याय करें उसमें क्या है? अब शिष्य पूछता है कि यह अध्यवसानादि भाव जीव नहीं हैं तो वह एक, टंकोत्कीर्ण,परमार्थस्वरूप जीव कैसा है? प्रश्न एक, शुद्ध आत्मा कैसा है और उसका लक्षण क्या है? दो प्रश्न आया| उसका लक्षण क्या है? इस प्रकार इस प्रश्नका उत्तर आचार्य भगवान फरमाते है।

जीव चेतनागुण, शब्द-रस-रूप-गन्ध-व्यक्तिविहीन है,
निर्दिष्ट नहिं संस्थान उसका, ग्रहण नहिं है लिंगसे ॥४९॥

टीका:- **जीव निश्चयसे पुद्गलद्रव्यसे अन्य है**। पुद्गलद्रव्य है, एक जीव द्रव्य ने एक पुद्गलद्रव्य। ये आत्मा है वह पुद्गलद्रव्यसे भिन्न है। कभी भिन्न होता है? सिद्ध होवे तब? अभी, तीनोंकाल, तीनोंकाल (भिन्न है।)। आहाहा! पुद्गलद्रव्य से भिन्न है। भिन्न होगा ऐसा नहीं लिखा है, भिन्न है। **इसलिये उसमें रसगुण विद्यमान नहीं है**। रस नामका जो गुण है वो आत्मा में नहीं है। **अतः वह अरस है**। आत्मा चैतन्यरस तो है मगर पुद्गलका रस, खट्टा-मीठा रस उसमें नहीं है।

पुद्गलद्रव्यके गुणोंसे भी भिन्न होनेसे स्वयं भी रसगुण नहीं है। पुद्गलद्रव्य से भिन्न और पुद्गलद्रव्य का रस नाम का गुण उससे भी आत्मा भिन्न है। वो रस नामका जो गुण है वो पुद्गल में है, आत्मामें है नहीं, **इसलिये अरस है**। द्रव्यसे भिन्नता, गुणसे भिन्नता, पर्यायसे भिन्नता आहाहा! ये तो भेदज्ञानकी बंसी बजती है। आहाहा! भेदज्ञानका मंत्र है। **परमार्थसे पुद्गलद्रव्यका स्वामित्व भी उसके नहीं है**। आत्मा ऐसा तुं देख जो पुद्गलका स्वामी कभी हुआ नहीं है। **इसलिये वह द्रव्येन्द्रियके आलम्बनसे भी रस नहीं चखता अतः अरस है**। ये जीभ का अवलंबन लेकर रसका ज्ञान करनेवाला आत्मा नहीं है क्योंकि आत्मा अरस है। ये द्रव्यइंद्रियका स्वामी नहीं है वो रसको जानने का ये साधन नहीं है। साधन माना तो एकता हो गई। आहाहा! जानने का साधन तो ज्ञान है, आहाहा| ये द्रव्यइंद्रिय साधन नहीं है| आहाहा| जीभ साधन नहीं है। आहाहा| इसलिए द्रव्यइंद्रियके आलंबनसे भी रस नहीं चाखता। द्रव्यइंद्रिय का आलंबन लेनेकी जरूरत आत्माको नहीं है। रसका ज्ञान करनेके लिए, तेरे को रसका पुद्गलका रसका ज्ञान करना हों ने तो आत्माको जान। तो पुद्गलका, रसका, लोकालोकका ज्ञान भावश्रुतमें अभी हो जाएगा। आहाहा| केवलज्ञान तो होगा तभी प्रत्यक्ष होगा, अभी लोकालोक का ज्ञान भावश्रुत में आ जाता है। सब ज्ञेय उसमें, आहाहा! प्रतिभास होता है। आत्माको जाना उसने सबको जाना। **नहीं चखता अतः अरस है**।

अपने स्वभावकी दृष्टिसे देखा जाय तो, अभी दूसरा पॉइंट अभी इधर से भी मिलेंगे। भावइंद्रिय जब आवे ने तब वो लेना है। वो भावइन्द्रिय का बोल इसमें है और भावइंद्रियका बोल अभी इसमें आएगा। बादमें मिलान करेंगे। अभी द्रव्यइंद्रिय का भेदज्ञान हुआ। ३१ वी गाथाके माध्यम से भेदज्ञान हुआ और ४९मी गाथाके माध्यमसे भी द्रव्यइंद्रियका भेदज्ञान आचार्य भगवान ने कराया।

अभी एक सूक्ष्म भावइंद्रियसे भेदज्ञान, भेदज्ञान एक जुदा, वो थोड़ा सूक्ष्म है। द्रव्यइन्द्रियसे वो थोड़ा सूक्ष्म है, क्योंकि द्रव्यइंद्रिय तो मात्र बहिर निमित्तभूत है। वो तो प्योर (pure) पुद्गल की रचना है। मगर अंदर में जो क्षायोपशमज्ञान है, क्षायोपशमज्ञान वो जो, द्रव्यइन्द्रियका अवलंबन लेता है तो भावइंद्रिय बन

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

जाती है, और आत्माका अवलंबन लेवे तो अतींद्रिय बन जाए। दोही क्षायोपशम ज्ञान है। ज्ञानका दो भेद क्षायोपशम और क्षायिक। मोहका चार भेद है। उदय, उपशम, क्षय, क्षायोपशम। अभी ज्ञानका भेद का तो क्षायोपशम हो और क्षायिक हो, और क्षायोपशमज्ञान का भी दो भेद, एक अतींद्रियज्ञान क्षायोपशम और इंद्रियज्ञान भी क्षायोपशम। आहाहा! इससे अभी भावइन्द्रिय का साथ भेदज्ञानका प्रकरण आता है।

ज्ञान से ज्ञानका भेदज्ञान। हमारे पिताजी ने एक दफे मेरा अपना मुमुक्षुके पत्रमें लिखा तो मेरे पिताजी ने कहा कि मेरे ओर से लखों की भाई साहब ज्ञान से ज्ञान जुदा है ऐसा भेदज्ञान करो। तो मैंने कहा वो समझेगा नहीं। तो कहे नहीं समझेगा तो प्रश्न तो आएगा ना! के ज्ञानसे ज्ञानका भेदज्ञानकी बात क्या है? ज्ञानसे रागका भेदज्ञान तो सुना। मगर ज्ञानसे ज्ञानका भेद ज्ञान की क्या बात है, पत्र तो आएगा ने! आहाहा! पत्र नहीं आया। याने समझ में आवे तो प्रश्न करें| नहीं समझे, समझने की दरकार नहीं है वह भी प्रश्न नहीं करता है और समझ गया वो भी प्रश्न नहीं करता है। आहाहा| समझने की जिज्ञासा है और समाधान नहीं हो वो प्रश्न करता है। आहाहा| आभी आचार्य भगवान| आहाहा! शास्त्रज्ञान भैया ज्ञान नहीं है। प्रभु! भूल गया तुं। ये तेरा कपड़ेका वेपारका उघाड़ और हीराका वेपारका उघाड़, मधुभाई, वो आत्माका ज्ञान नहीं है। और यह दाल का जो वेपार है ये मगकी दाल, ये चनेकी दाल है समझे, इसका जो उघाड़ है ने, आहाहा! वो ज्ञान नहीं है, भैया! वो तो ज्ञान नहीं है उसके साथ तो पाप का संबंध हो जाता है| और शास्त्रज्ञान के साथ तो थोड़ा कषायकी मंदता पुण्य भी(होता है) तो भी वो ज्ञान नहीं वो तो पुण्य और पाप तो बाजु में रह जाता है। आहाहा| वो तो बाजुमें पड़ोशी तरीखे रहता है,आहाहा| मगर जो शास्त्रज्ञान, इंद्रियज्ञान, पांचइंद्रियका ज्ञान स्थूल है, मगर जो मानसिक ज्ञान है वो सूक्ष्म है। मन, भावमन कहे ने भावमन वो सूक्ष्म है। ऐसे आंख से तो मूर्तिक पदार्थ दिखते हैं वो तो स्थूल है। भावइंद्रिय खंडज्ञान उसको जाना तो उसको अपने मान लेता है। इंद्रियज्ञान का यह धरम है। जिसको जाने उसको अपना मान लेता है, अपनापन कर लेता है।

ऐसे एक बंध अधिकार है समयसार का उसमें भाव बंधकी पराकाष्ठा की एक बात आई। जैसे मैं पर को जिंदा रख सकु, सुखी-दुखी कर सकता हूं वह तो भावबंध मिथ्यात्व-अध्यवसान है ही| समझे? बचानेका भाव और मारनेका भाव, हिंसा के अहिंसा दो ही, उसमें अपनापन करें तो अध्यवसान है ही| मगर एक मन है इधर भावमन उसमें भगवानने कहा हुआ छह द्रव्य, धर्मास्तिकाय को मैं जानता हूं, अधर्मास्तिकाय को जानता हूं, आकाश को मैं जानता हूं, आहाहा! पाप हो गया, अध्यवसान हो गया, भावबंध हो गया, उसके साथ एकत्वबुद्धि हो गई, क्योंकि भावमन में भेदज्ञान करने की शक्ति उसमें नहीं है। एकत्व कर लेता है। भावमन जिसको जाने, चिंतन करें, आहाहा! चोबीश तीर्थंकरका मैं स्मरण करता हूं, आहाहा! क्या कहा? कि उस टाइम बाजुमें शुभभाव भक्ति का राग है। मगर अभी तो ये बात चलती है भावमनकी, भावमन में पर पदार्थ का चिंतन किया तुने, तो वे भावमन उसके साथ एकत्व करता है, भावबंध हो जाता है, अध्यवसान हो जाता है। ज्ञायक दिखाई नहीं दीया, तिरोभूत हो गया तो अन्य के साथ एकत्व करता ही है भावमन! आहाहा! बहुत सूक्ष्म बात है, मगर समझने जैसी है। सूक्ष्मका अर्थ नहीं समझ में आवे ऐसा नहीं। समझने के लिए थोड़ा उपयोग लगाना। समजे?

गुरुदेव कभी सूक्ष्म बात आती थी तब ऐसा बोलते थे कि जितना समझमे आये उतना समझो,

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

जितना समझाय उतना समझो, जितना समझमे आये उतना समझो। ये बात समझे बिना भवका अंत आनेवाला नहीं है। सूक्ष्म करके छोड़ देने जैसी चीज नहीं है। आत्मा ही सूक्ष्म है, तो उसको उपयोग भी सूक्ष्म करना पड़े। इंद्रियज्ञान स्थूण है, इन्द्रियज्ञान स्थूण है, स्थूण ज्ञानसे आत्मा का अनुभव होता नहीं। अतिन्द्रयज्ञान सुक्ष्म है। सुक्ष्म ज्ञानसे सुक्ष्म भगवान आत्माका दर्शन होता है।

दूसरा पॉइंट आता है अभी भावइंद्रियका, **भिन्न-भिन्न अपने-अपने विषयोंमें**, इंद्रियज्ञान का विषय भिन्न-भिन्न होता है| जैसे स्पर्श इंद्रियका विषय ठंडा-गर्म होता है, रस इंद्रियका, भावइन्द्रियकी बात चलती है, उसका विषय खट्टा-मीठा। ये (चक्षु इन्द्रियका विषय) धोणा-काला समझे? ऐसे सुगंध-दुर्गंध, ऐसे कर्कश आवाज, मीठा आवाज, ये सब पुद्गलकी पर्याय। उसका जो भाव, भाव है भावइंद्रिय उसका विषय, **भिन्न-भिन्न अपने-अपने विषयोंमें**, अपने-अपने विषयों में प्रवृत्ति करती है। इधर (स्पर्श इंद्रियसे) ठंडा लगता है मगर खट्टा-मीठा का स्वाद आता नहीं है, उसकी योग्यता है। योग्यता के साथ इतना ही संबंध रहता है। आहाहा! लिमिटेड (limited) है भावइंद्रिय, अतिंद्रीयज्ञान अनलिमिटेड (unlimited) है। पांचइंद्रियका विषयको एक समय में जान लेता है। पांचइंद्रियका विषयको एक समयमें जान लेता है, और इंद्रिय की सन्मुख नहीं करना पड़ता है। वो विषयकी सन्मुख भी नहीं करता है उपयोग, उपयोग आत्मसन्मुख होता है तो सब जानने में आ जाता है। अलौकिक चीज है।

भिन्न-भिन्न अपने-अपने विषयोंमें व्यापारभावसे, व्यापारभावसे देखो व्यापार लिखा समझे, जो इंद्रियज्ञान भावइंद्रिय है ने वो लब्ध और उपयोग होता है, समझे? जब उपयोग होता है उसका नाम व्यापार। दूसरी इंद्रियज्ञानका उघाड़ लब्धरूप होता है। एक इन्द्रियका व्यापार होता है तो दूसरी चार इंद्रियका व्यापार लब्ध हो जाता है। आहाहा! अभाव नहीं होता है, अभाव (नहीं होता है) उसकी शक्ति रहती है जानने की, जाननेका व्यापार बंध हो गया। पर जाननेकी शक्ति तो रहती है, क्षायोपशम तो इतना रहता है जाता नहीं है।

अपने-अपने विषयमें व्यापारभावसे जो विषयों को खंड-खंड ग्रहण करती हैं। आहाहा! जो इंद्रियज्ञान है ने एक-एक विषय को जानता है तो ज्ञान ही खंड हो गया, अखंड नहीं रहा। ज्ञेय से ज्ञेय आन्तर, ज्ञेय आन्तर, बार-बार ऐसे घूमता है इंद्रियज्ञान। आहाहा! इंद्रियज्ञानमें स्थिरता नहीं आती है| उसका स्वभाव ही अस्थिर है, चंचल है| क्या कहा? इंद्रियज्ञान भावइंद्रियका स्वभाव ही चंचल है। ईधर बैठे और ये चलता है ३१ गाथा और कभी परदेशका वेपारका विचार आ जावे, कभी कुटुंबका, कभी उघराणीका, कभी क्या, कभी क्या, ऐसा ऐसा चंचल है इंद्रियज्ञान आहाहा| अतींद्रियज्ञान तो स्थिर है, चंचलता उसमें नहीं है। भगवानआत्मा तो अचल है, स्थिर है मगर उसका आश्रयसे हुआ जो अतींद्रियज्ञान, सम्यकज्ञान, स्वसंवेदनज्ञान वह भी स्थिर है क्योंकि उसका विषय स्थिर है। उसका विषय (स्थिर है) और भावइंद्रियका विषय अस्थिर है। भावइंद्रियका विषय (अस्थिर है) तो अस्थिरका लक्षे इधर भी अस्थिरता हो जाती है, ऐसा निमित्त नैमित्तिक संबंध बनता है। है अपनी योग्यतासे, है तो अपनी स्वतंत्र योग्यतासे उधर फेरफार हुआ तो इसके कारणसे(यहाँ) फेरफार होता है ऐसा नहीं है।

विषयोंको खण्डखण्ड ग्रहण करती हैं - ज्ञानको खण्डखण्डरूप बतलाती हैं। ज्ञान को खंड-खंड रूप बतलाती है| इसका क्या अर्थ है के पहले इसको जाना तो ये खंड ज्ञान हो गया, बादमें इसको

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com

जाना, बादमें इसको जाना तो ज्ञान-ज्ञेय खंड-खंड रूप अनेक है, ज्ञेय अनेक है तो अनेकका लक्षसे ज्ञान की पर्यायभी खंड-खंड होती है। आहाहा! ऐसे ज्ञान, ज्ञेय ज्ञानको खंड-खंड है ऐसी प्रसिद्धि करती है। **ज्ञानको खंडखंडरूप बतलाती है**। ज्ञेयका संबंधसे। **ऐसी भावेन्द्रियोंको**, **प्रतीतिमें आनेवाली**, अभी प्रतीतिका विषय आया। श्रद्धा का विषय आया। खंडज्ञान जितने में श्रद्धा बलवान होती है। जब श्रद्धा बलवान होती है अंदरमें से तब खंडज्ञान जीता जाता है। कैसे जीता जाए? के मैं परको जानता नहीं हूं ऐसा अंदर में से, अंदर में से श्रद्धा का बल आता है। प्रथम विकल्पआत्मक बल आता है। व्यवहार श्रद्धा प्रगट होती है कि मैं परको जानने वाला (नहीं) आहाहा! तो वो जो उपयोग बाहर घूमता था वो वहांसे व्याव्रत हो जाता है. व्याव्रत समझे? लौट जाता है।

ऐसा एक दफे ये शांतिभाई का लड़का है, तत्त्व का अभ्यासी, रुचिवाला, पंकज उसका नाम है| उसकी साथ चर्चा हुई|

ॐ

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com